International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)

E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

"देवी को मिथक, महिषासुर को नायक" : इस नैरेटिव का सच
महिषासुर के आधुनिक पुनर्पाठ का सांस्कृतिक एवं समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. राधा मिश्रा

बरकतुल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल

सारांश

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में देवी-देवताओं से संबंधित आख्यान केवल प्राचीन कथाएँ नहीं हैं, बल्कि वे उपासना, पर्व, अनुष्ठान, सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक जीवन के जीवित आधार हैं। महिषासुर का प्रसंग इसी व्यापक परंपरा में देवी-माहात्म्य के माध्यम से प्रतिष्ठित हुआ, जहाँ माँ दुर्गा और महिषासुर का संघर्ष तथा महिषासुर-वध देवी की दैवी विजय के रूप में वर्णित है। देवी-माहात्म्य को मार्कण्डेय पुराण के भीतर स्थित एक महत्त्वपूर्ण पाठ के रूप में देखा जाता है और इसके महिषासुर-वध प्रसंग ने शाक्त परंपरा में अत्यंत व्यापक प्रभाव डाला है। समकालीन समय में इसी पात्र का एक भिन्न पुनर्पाठ विकसित हुआ है। कुछ संगठनों, लेखकों और सामाजिक आंदोलनों ने महिषासुर को जननायक, बहुजन नायक, मूलनिवासी नायक अथवा प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया तथा उसके वध को "शहादत" के रूप में अर्थ दिया। JNU Library Archive में 2013 के "Mahishasur Day" से संबंधित अभिलेख इस आधुनिक सार्वजनिक विमर्श के अस्तित्व का स्पष्ट दस्तावेज है। Moumita Sen के अध्ययनों में भी महिषासुर के आधुनिक पुनर्पाठ को सामाजिक आंदोलन, राजनीतिक प्रतीक, प्रतिनैरेटिव और नई प्रतीक-निर्मिति की प्रक्रिया से जोड़ा गया है।

यह शोध-पत्र इसी परिवर्तन को नैरेटिव, प्रतिनैरेटिव, सांस्कृतिक वर्चस्व, सांस्कृतिक मानसिकता और कल्चरल मार्क्सवाद के व्यापक वैचारिक संदर्भ में समझता है। इसका केंद्रीय प्रश्न यह है कि यदि माँ दुर्गा के पारंपरिक आख्यान को केवल मिथक कहकर उसके धार्मिक अर्थ को कमतर किया जाता है, तो महिषासुर के आधुनिक पुनर्पाठ को इतिहास, शहादत और जननायकत्व की श्रेणी में रखने के लिए कौन-सी समान प्रमाण-कसौटी अपनाई जाती है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि आधुनिक सामाजिक समूह किसी पुराने प्रतीक का नया अर्थ निर्मित कर सकते हैं, किंतु नया अर्थ निर्मित होना मूल धार्मिक आख्यान को स्वतः निरस्त नहीं करता।

मुख्य शब्द: महिषासुर, माँ दुर्गा, देवी-माहात्म्य, नैरेटिव, प्रतिनैरेटिव, सांस्कृतिक वर्चस्व, कल्चरल मार्क्सवाद, सांस्कृतिक स्मृति, धार्मिक आस्था, पहचान।

1. प्रस्तावना

भारतीय समाज को समझने के लिए केवल आधुनिक इतिहास-लेखन पर्याप्त आधार नहीं है। भारतीय सांस्कृतिक स्मृति का निर्माण वेद, उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत, देवी-उपासना, मंदिर-परंपरा, व्रत, पर्व और पीढ़ियों से चले आ रहे धार्मिक आचरणों के माध्यम से हुआ है। इस कारण प्रभु श्री राम, माता सीता और माँ दुर्गा जैसे धार्मिक प्रतीकों को केवल साहित्यिक पात्र मानकर उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा को समझना भारतीय समाज की वास्तविक सांस्कृतिक संरचना को अधूरा देखना होगा। आस्था का सामाजिक जीवन किसी आधुनिक विश्वविद्यालय की स्वीकृति पर निर्भर नहीं होता। धार्मिक

परंपरा अपने अनुयायियों के जीवन में स्मृति, संस्कार, पूजा, अनुष्ठान और सामूहिक पहचान के रूप में उपस्थित रहती है। अतः किसी धार्मिक आख्यान का आधुनिक वैचारिक पुनर्पाठ अपने आप उस आख्यान की पारंपरिक धार्मिक मान्यता को समाप्त नहीं करता। महिषासुर के संदर्भ में यह प्रश्न और महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि यहाँ एक पारंपरिक धार्मिक आख्यान के पात्र को आधुनिक सामाजिक पहचान और राजनीतिक प्रतिरोध के प्रतीक में रूपांतरित करने की प्रक्रिया दिखाई देती है। इस प्रक्रिया को समझना केवल धर्म-अध्ययन का विषय नहीं, बल्कि समाजशास्त्र, सांस्कृतिक अध्ययन और राजनीतिक समाजशास्त्र का भी विषय है।

2. शोध की समस्या

महिषासुर के आधुनिक विमर्श में दो अलग अर्थ-व्यवस्थाएँ एक-दूसरे के सामने दिखाई देती हैं। पहली, सनातन धार्मिक परंपरा की वह अर्थ-व्यवस्था जिसमें महिषासुर असुर-राज है और माँ दुर्गा द्वारा उसका वध दैवी शक्ति की विजय के रूप में प्रतिष्ठित है। दूसरी, आधुनिक पुनर्पाठ की वह अर्थ-व्यवस्था जिसमें महिषासुर को उत्पीड़ित समूहों के पूर्वज, जननायक अथवा प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में पुनर्स्थापित किया जाता है। आधुनिक अध्ययनों में इस परिवर्तन को महिषासुर की "political deification", नई iconography और counter-culture के रूप में दर्ज किया गया है। इसलिए शोध की मूल समस्या यह नहीं है कि किसी समूह को महिषासुर में नया अर्थ क्यों दिखाई देता है; बल्कि यह है कि पुराने धार्मिक प्रतीक को नए अर्थ में रूपांतरित करते समय किस प्रकार मूल आख्यान की अर्थ-संरचना बदली जाती है। इसी के साथ यह भी देखना आवश्यक है कि "मिथक", "इतिहास", "शहादत", "जननायक" और "वर्चस्व" जैसे शब्द किस प्रमाण-व्यवस्था के आधार पर प्रयुक्त किए जाते हैं।

3. अध्ययन के उद्देश्य एवं शोध-प्रश्न

इस अध्ययन का उद्देश्य महिषासुर के पारंपरिक धार्मिक आख्यान और उसके प्रमुख पाठीय आधार को समझना, आधुनिक पुनर्पाठ में जननायक, शहादत, प्रतिरोध और पहचान जैसे अर्थों के निर्माण का विश्लेषण करना तथा नैरेटिव और प्रतिनैरेटिव के निर्माण में सांस्कृतिक शक्ति की भूमिका का परीक्षण करना है। इसके साथ ही ग्राम्शी की सांस्कृतिक वर्चस्व संबंधी अवधारणा के आधार पर सांस्कृतिक मानसिकता और अर्थ-निर्माण को समझना, कल्चरल मार्क्सवाद से संबंधित वैचारिक प्रतिमानों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना तथा लोक-स्मृति, धार्मिक आख्यान और ऐतिहासिक प्रमाण के बीच पद्धतिगत अंतर स्पष्ट करना भी इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं। अध्ययन का केंद्रीय शोध-प्रश्न यह है कि महिषासुर के पारंपरिक धार्मिक स्वरूप को आधुनिक सामाजिक-राजनीतिक विमर्श में किस प्रकार नए अर्थ दिए गए हैं और इन अर्थों का मूल्यांकन किन प्रमाण-कसौटियों पर किया जाना चाहिए

4. शोध-पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक, वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। अध्ययन में प्राथमिक धार्मिक स्रोत के रूप में देवी-माहात्म्य तथा महिषासुर से संबंधित पुराणीय सामग्री को आधार बनाया गया है। देवी-माहात्म्य के पाठीय और धार्मिक महत्त्व को समझने के लिए Coburn (1984) के अध्ययन का उपयोग किया गया है। आधुनिक महिषासुर विमर्श को समझने के लिए Sen (2022a, 2023) के अकादमिक अध्ययनों तथा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय अभिलेखागार में उपलब्ध "Mahishasur Day observed at JNU" अभिलेख का उपयोग किया गया है।

सैद्धांतिक स्तर पर ग्राम्शी की सांस्कृतिक वर्चस्व और subaltern social groups संबंधी अवधारणाओं को आधार बनाया गया है। आधुनिक महिषासुर विमर्श के समर्थक साहित्य की दिशा समझने के लिए प्रमोद रंजन द्वारा संपादित सामग्री को भी संदर्भित किया गया है। पद्धतिगत रूप से इस अध्ययन में धार्मिक आख्यान, आधुनिक वैचारिक पुनर्पाठ और ऐतिहासिक प्रमाण को तीन पृथक स्तरों पर देखा गया है। किसी समुदाय की लोक-स्मृति को सामाजिक तथ्य माना जा सकता है, किंतु उससे किसी पुराणीय पात्र की ऐतिहासिक पहचान स्वतः सिद्ध नहीं होती। इसी प्रकार किसी आधुनिक आयोजन का अभिलेख उस आयोजन के अस्तित्व का प्रमाण है; वह प्राचीन परंपरा की प्राचीनता का प्रमाण नहीं है।

5. महिषासुर का पारंपरिक धार्मिक आख्यान

महिषासुर का प्रसिद्ध आख्यान देवी-माहात्म्य में मिलता है, जो मार्कण्डेय पुराण का महत्त्वपूर्ण अंश है। देवी-माहात्म्य के महिषासुर-वध प्रसंग में देवताओं के तेज से देवी का प्राकट्य, महिषासुर के साथ युद्ध और अंततः उसके वध का वर्णन मिलता है। इस परंपरा में माँ दुर्गा केवल किसी सांसारिक युद्ध की विजेता नहीं, बल्कि दैवी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। थॉमस बी. कोबर्न के अध्ययन में देवी-माहात्म्य की संरचना और देवी-तत्त्व के धार्मिक विकास का विस्तृत विश्लेषण मिलता है। महिषासुर-वध का प्रसंग भारतीय कला, उपासना और धार्मिक प्रतीक-व्यवस्था में अत्यंत प्रभावशाली रहा है। देवी-माहात्म्य के अतिरिक्त अन्य पुराणीय परंपराओं में भी महिषासुर के संदर्भ मिलते हैं। इसलिए महिषासुर का धार्मिक आख्यान किसी एक आधुनिक समय में अचानक निर्मित हुई कथा नहीं है; उसका पाठीय और धार्मिक आधार दीर्घकालीन पुराणीय परंपरा में स्थित है।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण बात स्पष्ट करना आवश्यक है धार्मिक परंपरा में किसी आख्यान का सत्य केवल आधुनिक इतिहास की प्रमाण-पद्धति से निर्धारित नहीं होता। धार्मिक आख्यान का अपना धर्मशास्त्रीय, सांस्कृतिक और आस्थागत संदर्भ होता है। इसलिए उसे आधुनिक राजनीतिक व्याख्या के लिए केवल "मिथक" कहकर सीमित करना उसकी परंपरागत भूमिका को पूरा व्यक्त नहीं करता।

6. वध को "शहादत" और महिषासुर को "जननायक" बनाने का प्रयास

आधुनिक महिषासुर विमर्श का सबसे स्पष्ट परिवर्तन शब्दावली और प्रतीक-निर्माण के स्तर पर दिखाई देता है। पारंपरिक धार्मिक आख्यान में महिषासुर का वध माँ दुर्गा की विजय है; आधुनिक पुनर्पाठ में वही घटना "शहादत" के रूप में प्रस्तुत की जाती है। पारंपरिक आख्यान में महिषासुर असुर-राज है; आधुनिक आंदोलनकारी साहित्य में वह जननायक, बहुजन नायक अथवा प्रतिरोध के प्रतीक के रूप में सामने आता है। आधुनिक अध्ययनों में इस परिवर्तन को राजनीतिक प्रतीक-निर्माण और नई iconography के निर्माण के रूप में दर्ज किया गया है। यह केवल शब्दों का परिवर्तन नहीं है। "वध" को "शहादत" कहने से घटना का नैतिक अर्थ उलट जाता है। "असुर-राज" को "जननायक" कहने से पात्र की सामाजिक पहचान बदलती है। माँ दुर्गा की विजय को "वर्चस्व" के रूप में पढ़ने से देवी और महिषासुर के संबंध की पारंपरिक नैतिक संरचना भी उलट जाती है। यही वह बिंदु है जहाँ नैरेटिव का पुनर्निर्माण आरंभ होता है।

महिषासुर के लिए "शहादत" और "जननायक" जैसे नए अर्थ निर्मित करने से आधुनिक नैरेटिव बनाया जा सकता है, किंतु इससे मूल धार्मिक आख्यान का पारंपरिक अर्थ परिवर्तित नहीं हो जाता। नया अर्थ किसी वर्तमान समूह की सांस्कृतिक पहचान को व्यक्त कर सकता है, पर वह अपने आप प्राचीन आख्यान का प्रमाणित इतिहास नहीं बन जाता।

7. सबसे बड़ा विरोधाभास : देवी मिथक, महिषासुर इतिहास ?

आधुनिक पुनर्पाठ का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न प्रमाण की समान कसौटी से संबंधित है। यदि माँ दुर्गा के आख्यान को "मिथक" कहकर उसके धार्मिक अर्थ को अस्वीकार किया जाता है, तो महिषासुर को "इतिहास" और "जननायक" सिद्ध करने के लिए स्वतंत्र ऐतिहासिक प्रमाण अपेक्षित होंगे। केवल आधुनिक लेखन, राजनीतिक आयोजन या नई सामूहिक स्मृति किसी प्राचीन पात्र की ऐतिहासिकता स्वतः सिद्ध नहीं करती।

पारंपरिक धार्मिक आख्यान	आधुनिक पुनर्पाठ	शोधगत टिप्पणी
माँ दुर्गा : दैवी शक्ति एवं विजय का स्वरूप	माँ दुर्गा के आख्यान को "मिथक" के रूप में सीमित करना	धार्मिक अर्थ और ऐतिहासिक पद्धति को अलग-अलग समझना आवश्यक है।
महिषासुर : असुर-राज एवं प्रतिपक्षी	महिषासुर : जननायक अथवा प्रतिरोध का प्रतीक	आधुनिक प्रतीकात्मक अर्थ अपने आप प्राचीन ऐतिहासिकता सिद्ध नहीं करता।
महिषासुर-वध : देवी की विजय	महिषासुर-वध : "शहादत" के रूप में पुनर्व्याख्या	दोनों व्याख्याओं के लिए प्रयुक्त प्रमाण-कसौटी स्पष्ट होनी चाहिए।

8. नैरेटिव का परिवर्तन : वध से शहादत तक

नैरेटिव केवल घटनाओं का वर्णन नहीं करता; वह घटनाओं को अर्थ देता है। किसी घटना के लिए प्रयुक्त शब्द उसके नैतिक और सामाजिक अर्थ को प्रभावित करते हैं। "वध" शब्द धार्मिक आख्यान में दैवी विजय की ओर संकेत करता है, जबकि "शहादत" शब्द किसी ऐसे व्यक्ति की छवि निर्मित करता है जिसने किसी उच्चतर उद्देश्य के लिए प्राण दिए। इसलिए "वध" से "शहादत" की ओर परिवर्तन एक गहरा वैचारिक परिवर्तन है। इसी प्रकार "महिषासुर" से "महिषासुर जननायक" की यात्रा केवल नाम में विशेषण जोड़ना नहीं है। इसमें एक नया सामूहिक चरित्र निर्मित किया जाता है। मौमिता सेन के अकादमिक अध्ययन में महिषासुर की नई iconography और राजनीतिक प्रतीक के निर्माण की प्रक्रिया का विश्लेषण किया गया है; यह दर्शाता है कि आधुनिक आंदोलन ने पुराने पात्र के लिए नई दृश्य और वैचारिक छवि विकसित की।

9. नैरेटिव और सांस्कृतिक वर्चस्व

एंटोनियो ग्राम्शी ने सांस्कृतिक वर्चस्व के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया कि सत्ता केवल प्रत्यक्ष बल से नहीं, बल्कि विचारों, सामान्य-बोध और सांस्कृतिक सहमति के निर्माण से भी कार्य करती है। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा प्रकाशित आलोचनात्मक संस्करणों में ग्राम्शी के लेखन में hegemony, civil society, state और subaltern groups संबंधी विचारों का विस्तार मिलता है।

इस सैद्धांतिक आधार पर महिषासुर विमर्श को देखें तो एक पारंपरिक सांस्कृतिक आख्यान के सामने वैकल्पिक आख्यान निर्मित करने की प्रक्रिया दिखाई देती है। स्थापित कथा में माँ दुर्गा विजयी शक्ति हैं और महिषासुर पराजित असुर-राज; नैरेटिव में महिषासुर को प्रतिरोध और अस्मिता का प्रतीक बनाया जाता है। इस प्रकार संघर्ष केवल पात्रों के बीच नहीं रहता, बल्कि स्मृति और अर्थ के स्तर पर भी स्थानांतरित हो जाता है।

यहीं सांस्कृतिक शक्ति की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है। जो समूह किसी प्रतीक का अर्थ निर्धारित करता है, वह उस प्रतीक के माध्यम से सामाजिक पहचान को भी प्रभावित कर सकता है। अतः महिषासुर के पुनर्पाठ को केवल धार्मिक मतभेद के रूप में नहीं, बल्कि अर्थ-निर्माण और सांस्कृतिक शक्ति के संघर्ष के रूप में भी पढ़ा जा सकता है।

10. कल्चरल मार्क्सवाद और सांस्कृतिक मानसिकता

कल्चरल मार्क्सवाद पद का प्रयोग विभिन्न बौद्धिक और राजनीतिक संदर्भों में अलग-अलग अर्थों में किया जाता है; इसलिए इसे एक सर्वमान्य, एकरेखीय सिद्धांत मानना उचित नहीं होगा। इस अध्ययन में इस पद का उपयोग संस्कृति, विचारधारा, सामाजिक चेतना, सत्ता-संबंध और सामूहिक मानसिकता के परस्पर संबंधों की आलोचनात्मक व्याख्या के व्यापक संदर्भ में किया गया है। ग्राम्शी की सांस्कृतिक वर्चस्व संबंधी अवधारणा यह समझने में सहायता करती है कि सामाजिक सहमति, सामान्य-बोध और सांस्कृतिक संस्थाओं के माध्यम से विचार किस प्रकार प्रभावशाली बनते हैं।

इस दृष्टि से महिषासुर का आधुनिक पुनर्पाठ एक बड़े सांस्कृतिक प्रतिमान के भीतर दिखाई देता है, जहाँ पारंपरिक प्रतीकों की पुनर्व्याख्या, स्थापित सांस्कृतिक अर्थों का पुनर्मूल्यांकन, वैकल्पिक स्मृति का निर्माण और नए पहचान-समूहों के लिए नए प्रतीकों की स्थापना एक-दूसरे से जुड़ते हैं। महिषासुर को असुर-राज से जननायक, वध से शहादत और देवी-विजय से वर्चस्व में रूपांतरित करना इसी अर्थ-परिवर्तन की प्रक्रिया का उदाहरण है। इस संदर्भ में यह स्पष्ट रखना आवश्यक है कि ग्राम्शी के विचारों और "कल्चरल मार्क्सवाद" नाम से प्रचलित व्यापक राजनीतिक पद को पूरी तरह समानार्थी नहीं माना जा सकता। यहाँ ग्राम्शी की अवधारणाओं का उपयोग सांस्कृतिक वर्चस्व और अर्थ-निर्माण को समझने के सैद्धांतिक उपकरण के रूप में किया गया है, जबकि कल्चरल मार्क्सवाद का उल्लेख समकालीन विमर्श में प्रयुक्त व्यापक वैचारिक संज्ञा के रूप में है।

महिषासुर विमर्श में यही बिंदु विशेष महत्त्व रखता है। यहाँ किसी पुराने पात्र को केवल नया नाम नहीं दिया गया, बल्कि उसके चारों ओर नई स्मृति, नई भाषा, नए अनुष्ठान, नई छवि और नया सामाजिक अर्थ निर्मित किया गया। मौमिता सेन के अकादमिक अध्ययन में भी महिषासुर की नई iconography को सामाजिक आंदोलन, राजनीतिक विचार और counter-culture से जोड़ा गया है।

11. महिषासुर को प्रतिनायक से नायक में बदलने की प्रक्रिया

पारंपरिक आख्यान में महिषासुर का स्थान विरोधी शक्ति का है। आधुनिक पुनर्पाठ में वही पात्र नायक बनता है। इस परिवर्तन के लिए तीन प्रमुख प्रक्रियाएँ दिखाई देती हैं पहली, चरित्र का नैतिक पुनर्मूल्यांकन; दूसरी, घटना की भाषा का परिवर्तन; और तीसरी, सामूहिक स्मृति का पुनर्गठन। नैतिक पुनर्मूल्यांकन में महिषासुर को दैत्य या असुर के स्थान पर न्याय, प्रतिरोध और जनहित से जोड़ा जाता है। घटना की भाषा में उसके वध को शहादत कहा जाता है। सामूहिक स्मृति के पुनर्गठन में महिषासुर दिवस, स्मरण-दिवस, नई प्रतिमाएँ और सार्वजनिक विमर्श जैसे रूप सामने आते हैं। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय अभिलेखागार में 2013 के आयोजन का अभिलेख इस आधुनिक सार्वजनिक स्मृति-निर्माण का प्रमाण है। इस प्रकार एक धार्मिक पात्र आधुनिक पहचान-राजनीति का प्रतीक बनता है। आधुनिक अकादमिक साहित्य भी महिषासुर के पुनर्पाठ को सामाजिक आंदोलन, राजनीतिक समुदाय और counter-cultural formation से जोड़ता है।

12. महिषासुर शहादत दिवस : आधुनिक सार्वजनिक अभिव्यक्ति

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय अभिलेखागार में 17 अक्टूबर 2013 के अभिलेख में "Mahishasur Day observed at JNU" शीर्षक के अंतर्गत तीसरे Mahishasur Shahadat Diwas के आयोजन का विवरण उपलब्ध है। अभिलेख के अनुसार आयोजन All India Backward Students' Forum द्वारा JNU के School of Social Sciences में किया गया था। अभिलेख यह भी बताता है कि इस आयोजन में महिषासुर को पारंपरिक कथा से भिन्न रूप में "martyr" के रूप में प्रस्तुत किया गया। इस अभिलेख का महत्त्व इस बात में है कि यह आधुनिक सार्वजनिक विमर्श को प्रमाणित करता है। इससे यह स्थापित होता है कि महिषासुर की शहादत का विचार समकालीन सार्वजनिक क्षेत्र में आयोजित और व्यक्त किया गया। किंतु इस आधुनिक आयोजन को प्राचीन हिंदू धार्मिक पर्व के रूप में प्रस्तुत करना अलग दावा होगा, जिसके लिए अलग ऐतिहासिक प्रमाण आवश्यक होंगे।इसलिए "महिषासुर शहादत दिवस" को आधुनिक सांस्कृतिक-राजनीतिक निर्माण के रूप में समझना अधिक उचित है। इसका अध्ययन इस बात के लिए किया जा सकता है कि आधुनिक समाज किस प्रकार पुराने धार्मिक प्रतीकों के चारों ओर नई सामूहिक पहचान निर्मित करता है।

13. लोक-स्मृति, जनजातीय समुदाय और ऐतिहासिक प्रमाण

भारत के विभिन्न जनजातीय समुदायों की अपनी लोक-स्मृतियाँ, पूर्वज-कथाएँ, अनुष्ठान और सांस्कृतिक प्रतीक हैं। किसी समुदाय में किसी पात्र से संबंधित लोक-स्मृति स्वयं में महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्रीय तथ्य है। किंतु किसी लोक-स्मृति और पुराणीय पात्र के बीच प्रत्यक्ष ऐतिहासिक समानता स्थापित करने के लिए अतिरिक्त प्रमाण आवश्यक होते हैं। महिषासुर के संबंध में आधुनिक साहित्य में असुर जनजातीय समुदाय और महिषासुर की स्मृति को जोड़ने के प्रयास मिलते हैं। दूसरी ओर आधुनिक अकादमिक अध्ययन यह भी दिखाते हैं कि महिषासुर की छवि को राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में नए रूप में गढ़ा गया। इसलिए लोक-स्मृति और आधुनिक राजनीतिक पुनर्पाठ को एक ही श्रेणी में रख देना पद्धतिगत रूप से उचित नहीं होगा।

14. प्रभु श्री राम और माता सीता के संदर्भ में समान कसौटी

प्रभु श्री राम और माता सीता भारतीय सनातन परंपरा के अत्यंत प्रतिष्ठित धार्मिक आदर्श हैं। उनके संबंध में आधुनिक विमर्श में यदि किसी प्रसंग को सामाजिक इतिहास के प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, तो वही प्रमाण-कसौटी अन्य धार्मिक आख्यानों पर भी लागू होनी चाहिए।

उदाहरण के लिए, माता सीता की अग्निपरीक्षा के प्रसंग को यदि किसी काल की सामाजिक संरचना का प्रत्यक्ष ऐतिहासिक प्रमाण मान लिया जाए, तो यह पहले स्पष्ट करना होगा कि धार्मिक आख्यान, काव्यात्मक अभिव्यक्ति और प्रत्यक्ष सामाजिक इतिहास के बीच पद्धतिगत संबंध क्या है। उसी प्रकार यदि महिषासुर की कथा को धार्मिक आख्यान कहकर मिथक की श्रेणी में रखा जाता है, तो उसके आधुनिक पुनर्पाठ को बिना स्वतंत्र प्रमाण के प्रत्यक्ष इतिहास मानना भी समान कसौटी के अनुरूप नहीं होगा। यह तुलना प्रभु श्री राम या माता सीता की धार्मिक प्रतिष्ठा पर प्रश्न नहीं उठाती। इसका उद्देश्य केवल यह स्पष्ट करना है कि शोध में प्रमाण की कसौटी पात्र या पक्ष के अनुसार बदलनी नहीं चाहिए।

15. आस्था केवल नैरेटिव नहीं है

सनातन आस्था केवल किसी एक कथा या किसी एक पुस्तक के आधार पर निर्मित नहीं हुई है। यह दीर्घकालीन सांस्कृतिक अभ्यास, पूजा-पद्धति, मंदिर-परंपरा, पर्व, व्रत, परिवार, संस्कार और सामूहिक स्मृति से निर्मित जीवित परंपरा है। माँ दुर्गा की उपासना भारतीय धार्मिक जीवन में इसी व्यापक परंपरा का हिस्सा है। इसलिए किसी आधुनिक वैचारिक पुनर्पाठ से माँ दुर्गा की धार्मिक प्रतिष्ठा समाप्त नहीं होती। कोई समूह महिषासुर को अपने प्रतिरोध का प्रतीक बना सकता है; इससे माँ दुर्गा की सनातन उपासना, देवी-माहात्म्य का धार्मिक स्थान और महिषासुर-वध की पारंपरिक स्मृति समाप्त नहीं होती। आधुनिक पुनर्पाठ और सनातन धार्मिक परंपरा दो अलग सामाजिक स्तरों पर कार्य कर सकते हैं।

16. आधुनिक पुनर्पाठ की वैचारिक दिशा

महिषासुर विमर्श को व्यापक रूप में देखें तो एक क्रम दिखाई देता है—पारंपरिक धार्मिक आख्यान से भिन्न व्याख्या; उस व्याख्या में वैकल्पिक स्मृति का निर्माण; वैकल्पिक स्मृति को पहचान से जोड़ना; पहचान को सामाजिक प्रतिरोध से जोड़ना; और अंततः प्रतीक को सार्वजनिक राजनीतिक-सांस्कृतिक पहचान में रूपांतरित करना। Sen के शोध में इसी प्रकार महिषासुर की राजनीतिक deification और नई iconography की प्रक्रिया का विश्लेषण मिलता है। यह प्रक्रिया कल्चरल मार्क्सवाद से संबंधित उस व्यापक सांस्कृतिक दृष्टि से जुड़ती है जिसमें सामाजिक अर्थों को स्थिर मानने के स्थान पर सत्ता, विचारधारा, पहचान और सांस्कृतिक संघर्ष के संदर्भ में उनका पुनर्पाठ किया जाता है। ग्राम्शी की hegemony और subalternity संबंधी अवधारणाएँ इस प्रक्रिया को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण सैद्धांतिक उपकरण प्रदान करती हैं।

महिषासुर का आधुनिक पुनर्पाठ इसलिए केवल एक धार्मिक पात्र का पुनर्मूल्यांकन नहीं है; यह सांस्कृतिक अर्थों के पुनर्गठन का उदाहरण है। इसमें इतिहास, स्मृति, पहचान, प्रतीक, कला, सार्वजनिक आयोजन और वैचारिक भाषा परस्पर जुड़े हुए दिखाई देते हैं।

17. महिषासुर को नया अर्थ देने से पुरानी कथा नहीं बदल जाती

आधुनिक समाज में किसी प्रतीक को नया अर्थ देना संभव है। साहित्य, कला, राजनीति और सामाजिक आंदोलनों में यह प्रक्रिया बार-बार दिखाई देती है। किंतु नए अर्थ की निर्मिति और पुराने धार्मिक आख्यान का परिवर्तन दो अलग बातें हैं। यदि कोई समूह महिषासुर को जननायक मानता है, तो वह उसके लिए एक नई सांस्कृतिक व्याख्या निर्मित करता है। यदि कोई समूह उसके वध को शहादत कहता है, तो वह घटना का नया नैतिक अर्थ निर्मित करता है। यदि नई प्रतिमा में महिषासुर को वीर या दयालु राजा के रूप में दिखाया जाता है, तो वह नई iconography का निर्माण है। ये सभी आधुनिक सामाजिक तथ्य हैं और इनका समाजशास्त्रीय अध्ययन होना चाहिए। लेकिन इन आधुनिक अर्थों के कारण देवी-माहात्म्य का पारंपरिक आख्यान स्वतः बदल नहीं जाता। माँ दुर्गा और महिषासुर का धार्मिक संबंध उसी परंपरा के भीतर समझा जाएगा जिसमें देवी की विजय और महिषासुर-वध का विशिष्ट धार्मिक अर्थ है। इसलिए आधुनिक पुनर्पाठ का अध्ययन करना और उसे प्राचीन धार्मिक आख्यान का स्थान दे देना—दो अलग बातें हैं।

18. निष्कर्ष

महिषासुर का आधुनिक पुनर्पाठ भारतीय समाज में संस्कृति, स्मृति, पहचान और नैरेटिव शक्ति के संबंध को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण विषय है। आधुनिक आंदोलन ने महिषासुर को पारंपरिक असुर-राज की छवि से अलग करके जननायक, प्रतिरोध-प्रतीक और शहादत के केंद्र के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। अकादमिक अध्ययनों और JNU के सार्वजनिक अभिलेख से इस आधुनिक पुनर्पाठ और उसके सार्वजनिक रूपों का दस्तावेजी आधार मिलता है। इस पुनर्पाठ को समझने के लिए ग्राम्शी की सांस्कृतिक वर्चस्व की अवधारणा तथा कल्चरल मार्क्सवाद से विकसित सांस्कृतिक विश्लेषण की दृष्टि उपयोगी है। इसमें यह देखा जा सकता है कि सांस्कृतिक प्रतीकों के अर्थ कैसे पुनर्गठित होते हैं, वैकल्पिक स्मृतियाँ कैसे निर्मित होती हैं और पहचान-आधारित नैरेटिव किस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित होते हैं।

किन्तु शोध की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आधुनिक वैचारिक पुनर्पाठ और पारंपरिक धार्मिक आख्यान को अलग-अलग स्तरों पर पहचाना जाए। किसी आधुनिक समूह द्वारा किसी पात्र को जननायक कहना उस समूह की सांस्कृतिक स्थिति का प्रमाण है; वह अपने आप प्राचीन ऐतिहासिक सत्य का प्रमाण नहीं है। इसी प्रकार किसी धार्मिक आख्यान को आधुनिक शब्दावली में "मिथक" कह देना उसकी धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतिष्ठा को समाप्त नहीं करता। हिंदू धर्म और भारतीय सनातन परंपरा इतनी दुर्बल नहीं है कि किसी आधुनिक नैरेटिव के कारण उसकी जड़ें हिल जाएँ। महिषासुर को नया अर्थ दिया जा सकता है, उसके चारों ओर नया सांस्कृतिक आख्यान बनाया जा सकता है, पर इससे माँ दुर्गा की सनातन प्रतिष्ठा और देवी-माहात्म्य में वर्णित महिषासुर-वध का पारंपरिक अर्थ समाप्त नहीं होता। कथा का नया अर्थ गढ़ा जा सकता है, पर सनातन आस्था का अर्थ कोई अपनी सुविधा से निर्धारित नहीं कर सकता।

जय माता दी।

संदर्भ सूची

1. Coburn, T. B. (1984). Devī-Māhātmya: The crystallization of the goddess tradition. Motilal Banarsidass.
2. Gramsci, A. (2011). Prison notebooks (Vol. 1; J. A. Buttigieg & A. Callari, Eds. & Trans.). Columbia University Press.
3. Gramsci, A. (2021). Subaltern social groups: A critical edition of Prison Notebook 25 (J. A. Buttigieg & M. E. Green, Eds. & Trans.). Columbia University Press.
4. Jawaharlal Nehru University Library Archive. (2013, October 17). Mahishasur Day observed at JNU.
5. Ranjan, P. (Ed.). (2017). Mahishasur: A people's hero. Forward Press Books.
6. Sen, M. (2022). Between religion and politics: The political deification of Mahishasur. Religion, 52(4), 616–636. https://doi.org/10.1080/0048721X.2022.2094782
7. Sen, M. (2023). From demon to deity: Forging a new iconography for Mahishasur. Journal of Material Culture, 28(1), 106–130. https://doi.org/10.1177/13591835221116708
8. मार्कण्डेय पुराण. (दुर्गासप्तशती, अध्याय 2 4 (महिषासुर-वध प्रसंग).
9. देवीभागवत पुराण.
10. वराह पुराण
11. वामन पुराण.
12. स्कन्द पुराण.
13. शिव पुराण.